International Journal of New Media Studies *ISSN: 2394-4331*
Vol. 4 Issue 2, July-Dec., 2017

साक्षरता अभियानों के दौरान प्रयोग किए गए नाटकों की विषय-वस्तु

Sushil Kumar

Research Scholar, Dept. of Journalism & Mass Communication, MDU, Rohtak

भूमिका

साक्षरता का संदेश फैलाने के लिए एक महत्वपूर्ण व सशक्त हथियार के रूप में नुक्कड़ नाटकों का भरपूर इस्तेमाल किया गया। जिस–जिस राज्य में साक्षरता अभियान चले लगभग हर जगह नाटक का इस्तेमाल किया गया। नाटक, टेलिविज़न की तरह ही एक दृश्य–श्रव्य माध्यम है परन्तु टेलिविज़न से इस रूप में अलग इसलिए है कि इसे दर्शक कैमरे की आंख से नहीं बल्कि अपनी आंख से प्रत्यक्ष सजीव कलाकारों के साथ देखते हैं, और न केवल देखते हैं बल्कि देखते–देखते ही प्रतिक्रियाएं देते हैं और नाटक खत्म होने के बाद, अपने दिल की बात, कोई आलोचना या असहमति या कोई पसन्दगी/नपसन्दगी भी सांझा कर सकते हैं। अतः इसका असर भी बड़ा प्रभावशाली होता है। साक्षरता अभियानों के दौरान सैंकड़ों नाटक लिखे गए व उनकी हज़ारों प्रस्तुतियां की गईं। दर्शकों ने खूब आनन्द भी उठाया। इन नाटकों में प्रस्तुति का पक्ष हल्का हो सकता था क्योंकि नाटक करने वाले लड़के–लड़कियां प्रशिक्षित कलाकार नहीं थे परन्तु नाटकों की विषय–वस्तु गंभीर व शिक्षाप्रद होना लाजमी होता था। नाटकों के विषय आम जीवन से जुड़े हुए मुद्दे ही होते थे। यही कारण रहा कि दर्शक इन नाटकों से जुड़ाव महसूस करते थे। नाटक की मुनादी होते ही या ढोलक की थाप सुनते ही गांव और शहरों के जहां–तहां कोनों से निकल–निकल कर लोग नाटक के स्थान पर इकट्ठा होना शुरू कर देते थे। हमने प्रत्यक्ष रूप से भी उन नाटकों के मंचन देखे जो जनता के मुद्दों के नाटक थे और जिन नाटकों को देखने के बाद लोग बहुत प्रभावति होते थे। लोग कलाकारों और साक्षरता अभियान के नेतृत्वकर्ताओं के आस–पास घेरा बना लेते थे और कहते थे कि आपने तो बहुत अच्छी बात बताई। कोई कहता आपने तो सारी हमारी बात बता दी। घूंघट किए हुए महिलाएं आ कर कहतीं थीं कि आपका नाटक देखकर लगा जैसे हमारे ही जीवन की कहानी कह रहा है। ये सब ऐसी बातें थीं जो कलाकार को और

अभियानकर्ताओं को हौंसला देती थी। वे महसूस करते थे कि वे सामाजिक बदलाव के आन्दोलन से गहराई से जुड़े हुए हैं और यह भी कि इस प्रकार के प्रयास बदलाव ला सकते हैं। नाटक के मंचन के बाद बहुत से लोग तो स्वयं नाटक करने की इच्छा भी व्यक्त करते थे। बहुत से लोग इन अभियानों से नाटक के माध्यम से जुड़े भी। साक्षरता अभियानों की रिपोर्टों में इस बात का जहां–तहां उल्लेख मिल जाता है कि साक्षरता अभियान में जनता को शामिल करने के लिए वातावरण निर्माण करना बहुत जरूरी था। सवाल यह उठता है कि कैसा वातावरण निर्माण तथा इसके औज़ार क्या हों? साथ ही यह भी कि साक्षरता अभियानों से वातावरण निर्माण का क्या सम्बन्ध है।

आज़ादी के बाद के वर्षों में हम देखते हैं कि सरकार ने लोगों में शिक्षा के प्रचार–प्रसार के लिए कई तरह के प्रयास किए। लेकिन बहुत प्रयासों के बाद भी शिक्षा के प्रसार की गति काफी धीमी रही। लोगों में शालाओं में जाने का उत्साह नहीं था। अपने जीविका के मसलों में निरक्षर जनता उलझी हुई थी और उस पर कर्जे जैसी आर्थिक मुसीबतें, बीमारी, दिहाड़ी न मिलना, लड़की की शादी, खेती में नुकसान, परिवार नियोजन की जानकारी के अभाव में बड़े परिवारों की देखभाल और ऐसे ही जीवन से जुड़े बहुत से कारण जिसने निरक्षर जनता की साक्षरता कक्षाओं में भागीदारी को बहुत उत्साहित भागीदारी बनने से रोक रखा था। दूसरी ओर जातिवाद, सामाजिक पिछड़ापन और हाशिए के जीवन ने भी व्यक्तियों के आत्म–सम्मान को कुचल रखा था। जिससे सामाजिक भागीदारी या स्वयं के विकास की सभी इच्छाएं मृत–प्रायः हो जाती हैं। हमारे देश में तो जातिवाद, ऊंच–नीच और आर्थिक असमानताओं की पुरानी रिवायत है। ऐसे में लाखों–लाख आबादियों को हाशिए पर धकेल कर उन्हें इन्सानी जिन्दगी और नागरिक अधिकारों से वंचित रखने के षड़यंत्र राजनीति ने भी बार–बार खेले हैं। जो आबादी हमेशा से उत्पीड़ित व शोषित रही और जो आधी आबादी, देश की महिलाएं जिन्होंने चौका–बर्तन को ही जीवन मान लिया और उन गरीब आबादियों को जिन्होंने जीवन भर अपने अधिकार और अपने नागरिक हकों को छोड़ दिया। उन आबादियों को शिक्षा का महत्व बताना और साक्षरता अभियानों में आने के लिए प्रेरित करना एक चुनौती भरा काम था।

जब इन आबादियों के बीच साक्षरताकर्मी गए तो उन्होंने इन आबादियों से इनके शोषण की जड़ों पर बात की। तरह–तरह के शोषण की पहचान करना सिखाया, इससे आज़ाद होने के तरीकों पर बात की और उस जीवन के सपनों पर बात की, जो शोषण और उत्पीड़न से आज़ाद था। ऐसा जीवन सम्भव है यह हौंसला दिलाया गया। ज़ाहिर है इस बातचीत का कोई एक माध्यम नहीं हो सकता था अतः इस काम के लिए छोटे–छोटे समूहों में चर्चा से लेकर गीत गाना, कविताएं पढ़ना, पुस्तक वाचन, पर्चे पढ़ना और नाटक दिखाना इत्यादि सभी साधनों का प्रयोग तरह–तरह से

किया गया। यही वह माध्यम थे जिन्होंने एक ऐसे वातावरण का निर्माण किया जिसमें साक्षरता का काम सम्भव हो सका। यही वह औज़ार थे जिन्होंने निरक्षर व्यक्तियों को यह समझाया और अहसास करवाया कि उनके जीवन से इतर एक और जीवन भी है जिसमें आत्मसम्मान से जिया जा सकता है, शोषण से बचा जा सकता है, आत्मनिर्भर हुआ जा सकता है, अपना छोटा–मोटा हिसाब खुद रखा जा सकता है, कर्ज़ा लेने से पहले उसकी शर्तों को पढ़ा जा सकता है। यही वातावरण निर्माण जनसंचार के विभिन्न माध्यमों से किया गया जिसने इंसान के दिमाग में साक्षरता के प्रति ललक जगाई और उसे साक्षरता कक्षा में आने के लिए प्रेरित किया।

नाटकों की विषय-वस्तु

साक्षरता के इन जन अभियानों में सैंकड़ों नाटक रचे गए और उनकी हज़ारों प्रस्तुतियां की गई। अचरज की बात यह है कि सैंकड़ों नाटक समूह लेखन द्वारा या नाट्य कार्यशालाओं में रचे गए। जिनके लेखक स्वयं साक्षरता कार्यकर्ता थे। सुहेल हाश्मी, ''नुक्कड़ पर, भाग–1'' पुस्तक की भूमिका में लिखते हैं कि

''प्रौढ़ शिक्षा निदेशालय में हिन्दी राज्यों में साक्षरता अभियान में इस्तेमाल हो रहे नुक्कड़ नाटकों में से कुछ प्रतिनिधि नाटक चुनने के लिए विभिन्न राज्यों से नाटक स्क्रिपट्स मंगवाई गई। ... दिल्ली, हरियाणा, उत्तर प्रदेश, राजस्थान, मध्य प्रदेश और बिहार से भेजे गए लगभग 120 नाटकों की स्क्रिप्ट्स के विषयों की विविधता और संख्या दोनों ही चौंका देने वाली थी। यदि एक पत्र के जवाब में केवल हिन्दी भाषी राज्यों से ही इतने नाटक आ सकते हैं, जबकि साक्षरता अभियान इस सारे क्षेत्र में अभी पूरी तरह फैला भी नहीं है, तो यह अनुमान करना कठिन है कि सारे भारत में 200 से अधिक जिलों में कितनी अधिक संख्या में और कितनी विविध विधाओं में अभियान सामग्री तैयार हो रही है''[1]

जैसाकि पहले भी ज़िक्र किया गया है कि साक्षरता अभियानों के दौरान खेले जाने वाले नाटक ज्यादातर कार्यशालाओं में रचे गए इसलिए यह किसी एक लेखक की रचना नहीं मानी जा सकती। परन्तु सुहेल हाश्मी के शब्दों में ''इन नाटकों के रचनाकारों के बारे में इतना कहना काफी है कि वे उनमें से हैं जिन्होंने निरक्षरता के खिलाफ लड़ी जा रही जंग के सिपाहियों के हाथों में अचूक मार करने वाले हथियार दे दिए।''[2]

साक्षरता अभियानों में नाटकों के इस्तेमाल व उसके प्रभावों को समझने के लिए उसकी विषय वस्तु पर नज़र डालना अत्यन्त आवश्यक है। नाटकों की विषय–वस्तु जान कर ही उसके प्रभाव व वातावरण निर्माण की यह कुंजी कैसे काम करती है, इसे समझा जा सकता है। साक्षरता अभियान के दौरान एक प्रसिद्ध नाटक था – ''काका भी मान गये।''[3] इस नाटक में एक पति–पत्नी हरि और कमला काम की तलाश में गांव से आकर दिल्ली में बस जाते हैं। दोनों ही अनपढ़ हैं। हरि फैक्ट्री में

काम करता है। एक दिन गांव से पिता की बीमारी का तार आता है और उनके आने की सूचना भी उस तार में है। परन्तु तार को पढ़ कर सुनाने के लिए कमला को कोई नहीं मिलता और शाम को हरि के आने पर वह उसे सूचित करती है। हरि दर–दर भटक कर और कईयों से दुतकार खाकर आखिरकार एक नवयुवक से तार पढ़वाने में कामयाब हो जाता है। पर उस समय उसके पैर के नीचे से धरती खिसक जाती है जब उसे पता चलता है कि बीमार पिता के आने की सूचना तार में है और पिता की गाड़ी तो दोपहर में ही आ चुकी है। पिता को घर का पता मालूम नहीं था तो पिता भटकते–भटकते हरि के घर पहुंचते हैं। यह नाटक एक अनपढ़ व्यक्ति के मुश्किल जीवन की छोटी–छोटी रोज की दिक्कतों की ओर इशारा करता है। पिता के आ जाने के बाद हरि और उसके पिता का दिल्ली के सफदरजंग अस्पताल में बस द्वारा पहुंचना, लिफ्ट में चढ़ना, डाक्टर के कमरे के नम्बर को पूछ–पूछ कर उस तक पहुंचने में कितनी चुनौतियों और अपमान को ये नाटक बताता है। जिससे केवल शिक्षा ग्रहण कर लेने से बचा जा सकता था।

''अरे पढ़े क्यों?''[4] नाटक में झोला छाप और तंत्रमंत्र वाले बाबाओं द्वारा अनपढ़ जनता के शोषण की कहानी कही गई है। जिसमें गरीब समारू अपने बच्चे को दस्त लगने पर डॉक्टर के पास ले जाने की बजाय उसे तांत्रिक बाबा के पास ले जाता है। जो उससे बड़ी दक्षिणा मांग कर उसका आर्थिक शोषण करता है और जिस पर अनपढ़ समारू चुपचाप उस बाबा के कहे पर चलता रहता है और आखिर में ठगा जाता है। ''अंगूठा नगरी''[5] नाटक पीयूष मिश्रा द्वारा लिखा गया है। नाटक की शुरूआत एक लम्बे कथन से होती है। जिसमें सुई–सुई नामक पात्र सामंती व जातिवादी व्यवस्था का प्रतीक है। वह कहता है –

''अरे अंगूठों .....! हा हा हा ....।
अंगूठा छाप .....! हा हा हा .....।
तुम्हारी ये ही जात
तुम्हारी ये ही औकात
तुम्हारे ये ही बीज
तुम्हारी ये ही खाद
रहना अपनी जात में। समझे?
औकात में ! समझे?
वर्ना ये मेरी छड़ी । कड़कड़ी, तड़तड़ी !
कर देगी तुम सब की धड़धड़ा धड़धड़ी।''[6]

ये पंक्तियां स्पष्ट बताती है कि किस प्रकार दलित और शोषित आबादी के उत्पीड़न को निशाना बनाया गया है। नाटक में चिरूकदान पात्र, सुई सुई पात्र से रूपये उधार लेता है और आजीवन उस कर्ज़ से मुक्त नहीं हो पाता। तब एक नौजवान साक्षर युवक उस का पथप्रदर्शक बनता है और शिक्षा का महत्व बता कर, उसे साक्षर करता है और उसे कर्ज़ से मुक्ति दिलवाता है। ''तुम कब जानोगे''[7] नाटक सुखचैन और लक्ष्मी के मुश्किल जीवन की कहानी है। सुखचैन मेहनती, गरीब,

दलित किसान नवविवाहित है। खुशी–खुशी अपने वैवाहिक जीवन को जीना चाहता है और मेहनत करके अपने जीवन को सुंदर बनाना चाहता है। वह बड़े उत्साह से बिजाई के लिए गांव के ज़मीदार के पास ज़मीन मांगने जाता है और अज्ञानतावश उन्हीं की महंगी शर्तो पर बंजर पड़ी ज़मीन ले लिए ही अंगूठा लगा आता है और कहना चाहिए अपना जीवन जमीदार की बही में चढ़वा आता है। बड़ी मेहनत करके खेती करता है लेकिन बीज के थैले पर दिनांक नहीं पढ़ सकता तो पुराने बीज डालता है फलस्वरूप घटिया फसल पाता है। ज़मीदार की महंगी शर्तों को पूरा नहीं करता तो मकान गिरवी रखता है और दूसरी बार भी फसल धोखा दे जाती है तो मजबूरन गांव छोड़ कर भाग जाता है। शहर में फैक्ट्री मालिक के शोषण और दुर्घटना का शिकार होता है। जिसमें उसका आधा शरीर काम करना बंद कर देता है। फैक्ट्री मालिक से मुआवजे में कुछ नहीं मिलता। काम करने लायक शरीर न रहने से दुख में डूब शराबी हो जाता है। अपनी पत्नी और बच्चों को पीटता है और आख़िरकार मर जाता है। भारत में शायद हज़ारों–लाखों मजदूरों की यही कहानी है जो अज्ञानता और अशिक्षा की दलदल में पूरा जीवन कीड़े–मकौड़ों की तरह जीते हैं। उनका कोई नागरिक अधिकार नहीं होता। उनका कोई इन्सानी हक नहीं होता और वे इसे ही अपनी नियति मान लेते हैं। लेकिन इसी जीवन का जब नाटकीय रूपान्तरण उनके सामने किया जाता है तो वो पहली बार स्वयं को बाहर से देखते हैं और हैरान हो जाते हैं कि उन्होंने स्वयं के लिए कितना निम्न और गाफिल जीवन चुना है। अपने जीवन को देखना, समझना, सीखना शिक्षा व ज्ञान से संभव होता है और उसको बदलने की इच्छा करना इन्सान का अधिकार है। इस प्रकार के नाटक उन्हें वह दृष्टि देते हैं कि वे स्वयं को देखना सीख सकें, और अज्ञानता के कुचक्र से बाहर निकलें।

''बच्चे कहां हैं''[8] नाटक खेत–मजदूर के बच्चों के स्कूल न जाने पर एक संजीदा नाटक है। नाटक में बार–बार गायन मण्डली द्वारा गीत गाकर सूत्रधार की तरह खेत मजदूर के बच्चे के जीवन का चित्र प्रस्तुत किया जाता है। वह बच्चा जिसका बचपन पर हक नहीं है। जिसका बचपन उससे कोसों दूर है।

''जीवन खोता दुख ढोता ही जलता जाता बचपन
जलता तपता धीरे–धीरे मरता जाता बचपन
खेतों में खलिहानों में भी खपता जाता बचपन
रोजी रोटी के चक्कर में पिसता जाता बचपन
देखो बच्चों को शाला से दूर भगाता बचपन
जंगल–जंगल मारा–मारा ढ़ोर चराता बचपन
होटल में बर्तन धोता है, फिर भी यह भूखे सोते है
जीवन खोता दुख ढोता ही, मरता जाता बचपन।''[9]

गीत की पंक्तियों में नाटक की विषय–वस्तु का पूरा सार समझ आ जाता है। साक्षरता अभियानों के दौरान ये ऐसे नाटक थे जिनको हजारों–हजार लोगों ने देखा, सराहा और अपने जीवन के आइने

के रूप में उसकी पहचान की। इसी प्रकार एक नाटक था ''एक नई शुरुआत''[10] यह नाटक हरियाणा में जतन नाटक मंच के कलाकारों ने स्वयं सामूहिक रूप से कार्यशालाओं में सघन विचार–विमर्शों के बाद इज़ाद किया। इस नाटक के बनने की प्रक्रिया भी लम्बी थी। जिसमें मंचन के साथ–साथ ही नए बदलाव भी किए गए। इस नाटक की कई हजार प्रस्तुतियां हुई। इस नाटक में स्त्रियां हैं, बच्चियां हैं, युवा हैं, प्रौढ़ हैं, दलित है, और स्वर्ण जातियां भी हैं। इसमें परिवार और पंचायत है। प्रसिद्ध कवयित्री और समाज सुधारक शुभा, नाटक की प्रकाशित पुस्तिका के प्राक्कथन में लिखती हैं कि ''इस नाटक के संवाद लगातार उस जगह से निकले हैं जहां एक ढर्रे में बंधी पुरानी समझ और नई जरूरतों के बीच एक गहरा तनाव है। ... इस जगह इन्सानी रिश्तों, सामाजिक समस्याओं, घटनाओं, दुर्घटनाओं का गहरा संजाल है। यही तनाव की जगह असल में नाटक की जगह है।''[11] इस नाटक की विशेषता यह है कि इस नाटक में एक पूरा जीवन दिखाई देता है। नाटक में स्त्री भ्रूण हत्या से लेकर, छेड़खानी और बलात्कार जैसी घटनाओं पर समाज व पंचायतों का जो रूख रहता है उसकी आलोचना प्रस्तुत की गई है। नाटक में दलित लड़की के साथ बलात्कार की घटना को पूरा स्वर्ण समाज पंचायत के माध्यम से दबाने की कोशिश करता है। लेकिन अंत में दिखाया जाता है कि शिक्षक व जागरूक लोगों के साथ मिलकर और एकजुट होकर गरीब अनपढ़ तबका न्याय हासिल करता है।

निष्कर्ष

इस प्रकार के सैंकड़ों नाटकों का मंचन साक्षरता अभियानों के दौरान देखा गया। इन नाटकों में लड़कियों की शिक्षा, परिवार नियोजन, पर्यावरण, किसानों की आत्महत्या, खेती की समस्याएं, अंधविश्वास, दहेज, जातिप्रथा, घरेलू हिंसा, नशाखोरी और इस तरह के तमाम मुद्दों पर नाटक खेल कर लोगों को जागृत किया गया। नाटक के बाद लोग इतने प्रभावित होते कि स्वयं नाटक समूहों से जुड़ने की बात करते और साक्षरता कक्षाओं में हिस्सेदारी करने को पहुंचते। इतना ही नहीं जिस सामंती और स्वर्ण ताकतों के खिलाफ ये नाटक खेले जाते उनका गुस्सा भी इक्का–दुक्का नाटकों की प्रस्तुतियों के दौरान देखने को मिलता था। लेकिन वहीं दूसरी ओर से ऐसी आवाजों को दबाया जाता देखना भी हैरानी का सबब बनता था। नुक्कड़ नाटकों के मंचन का मैं स्वयं भी साक्षी रहा हूं। अतः प्रत्यक्ष अनुभवों व इसके प्रभावों के विश्लेषण से यह निष्कर्ष सामने आता है कि नाटक जोकि स्वयं कला का एक बहुत सुन्दर सशक्त माध्यम है उसने साक्षरता अभियानों में वातावरण निर्माण के लिए उन मुद्दों को उठाने में मदद की जिन पर बात करना निषिद्ध था। ये मुद्दे उस निरक्षर आबादी से जुड़े थे जिन्होंने कभी उन मुद्दों पर लड़ने, आवाज़ उठाने की हिम्मत नहीं की थी। अतः कहना न होगा कि जनसंचार के विभिन्न माध्यमों के साथ–साथ इन नाटकों ने भी निरक्षर

आबादियों को यह हौंसला दिया कि वे गलत के खिलाफ एकत्रित हों, आवाज उठाएं, शिक्षित हों, कुचले हुए न रहें। जो उन्होंने निरक्षरता के कारण भोगा वो उनकी अगली पीढ़ियां ना झेलें और इस तरह असाक्षरों को साक्षर होने की दिशा में अग्रसर किया।

संदर्भ

[1] सुहेल हाश्मी, भूमिका, नुक्कड़ पर : भाग–1, प्रौढ़ शिक्षा निदेशालय; नई दिल्ली, 1994 पृ–3

[2] वही, पृ–4

[3] समूह लेखन, काका भी मान गए, नुक्कड़ पर : भाग–1, प्रौढ़ शिक्षा निदेशालय; नई दिल्ली, 1994 पृ–1

[4] समूह लेखन, अरे पढ़ें क्यों?, वही, पृ–20

[5] पीयूष मिश्रा, अंगूठा नगरी, सात साक्षरता नाटक, प्रौढ़ शिक्षा निदेशालय; नई दिल्ली, 1995, पृ–26

[6] वही, पृ–26

[7] समूह लेखन, तुम कब जानोगे, नुक्कड़ पर : भाग–2, प्रौढ़ शिक्षा निदेशालय; नई दिल्ली, 1994, पृ–22

[8] समूह लेखन, बच्चे कहां हैं? नुक्कड़ पर : भाग–1, प्रौढ़ शिक्षा निदेशालय; नई दिल्ली, 1994, पृ–57

[9] वही, पृ–57–59

[10] समूह लेखन, एक नई शुरूआत, सर्च राज्य संसाधन केन्द्र–हरियाणा; रोहतक, 2000

[11] शुभा, एक नई शुरुआत, प्राक्क. सर्च राज्य संसाधन केन्द्र–हरियाणा; रोहतक, 2000, पृ–6